[श्री नलदुर्गकर]

क्षेत्र पर अनधिकृत कब्जा बनाये रखने का दुराग्रह करता है, तो इस के जो बुरे परिणाम होंगे, उनके लिये वही उत्तरदायी होगा। राष्ट्रपति के भाषण में चीन को काफी चेतावनी दे दी गई है।

राष्ट्रपति ने पंचायत राज्य का जो उल्लेख किया है उस का स्वागत किया जाना चाहिये। इस के अतिरिक्त नागा लैंड का निर्माण एक अलग राज्य के रूप में कर दिया गया है। आशा है कि नागा लैंड के नेता आदिम जातियों के सभी वर्गों को संगठित करने का प्रयत्न करेंगे। वे हिंसा के मार्ग को छोड़ प्रशासन को सहयोग देंगे। भारत का प्रत्येक नागरिक उनकी उन्नति और समृद्धि के लिये सदैव तैयार रहेगा।

†**प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक कार्य-मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू)** : बहुत से माननीय सदस्यों ने इस वाद-विवाद में भाग लिया है। और आलोचना तथा सुझावों के रूप में बहुत सी बातें कही हैं लेकिन उन सब के बारे में कुछ कहना मेरे लिये थोड़ा कठिन है। जो कुछ यहां कहा गया है उन के बारे में सभी सम्बन्धित मंत्रालय ध्यान देंगे। मेरा विचार है कि यहां जो बातें उठाई गई है उन के बारे में अलग-अलग से कुछ न कह कर समष्टि रूप से उन के बारे में कुछ कहूं।

सर्व प्रथम मैं श्री अशोक मेहता द्वारा की गई आलोचना का उल्लेख करूंगा। उन्हों ने बड़े जोरदार शब्दों में कहा है कि राष्ट्रपति का अभिभाषण नीरस है। सरकार का सदस्य होने के नाते, चूंकि हम इस अभिभाषण के लिये उत्तरदायी भी हैं, यह आलोचना निश्चय ही हम पर भी लागू होती है। मैं यह कहने के लिये तैयार हूं कि यह आलोचना आंशिक रूप में न्याय संगत भी है। मानव होने के नाते हम कभी-कभी अपनी राय, अपने द्वारा प्रयुक्त भाषा अथवा आलोचना के मामले में चरम सीमा तक पहुंच जाते हैं। मैं भी इस का शिकार हूं। मैं मानता हूं कि ऐसे अवसरों पर, हमेशा नहीं, अपनी भाषा पर काबू रखना चाहिये। और जो कुछ भी कहा जाये वह उद्देश्यपूर्ण होना चाहिये अब तक जितने अभिभाषण हुए हैं, चाहे उन की संख्या १२ अथवा उस से अधिक ही रही हो, मुझे ठीक से तो याद नहीं, उन में एक निश्चित भाषा का प्रयोग किया गया है। यह बात अच्छी हो या बुरी इस बारे में लोगों की राय अलग-अलग हो सकती है, लेकिन इतना जरूर है कि जब कभी भारत का प्रश्न आता है उसकी समस्याओं का सवाल उठता है, उस के भविष्य की बात उठती है तो सभी सदस्य, जैसा कि मैं भी करता हूं, बहुत जोर के साथ इसे महसूस करते हैं। हम भारत के अंग हैं, भावुकता की दृष्टि से हमें गहरे आघात पहुचे हैं। लेकिन मेरा यह निवेदन है कि ऐसे अवसरों पर हमें भावनाओं का शिकार नहीं होना चाहिये। और स्थिति का निरूपण भावनाओं के आधार पर नहीं करना चाहिये। मैं यह बात क्षमा मांगने की दृष्टि से नहीं कह रहा हूं बल्कि स्थिति का विश्लेषण कर रहा हूं। बातें बनाना आसान है—कोई कठिन बात नहीं है। दर असल बात यह है कि हमें कठिनाइयों का मुकाबला तो करना ही है। चाहे वे कठिनाइयां हमारे आर्थिक विकास एवं तत्सम्बन्धी भयानक परिणाम की हों अथवा वह कठिनाई हमारी सीमा पर अतिक्रमण की धमकी हों अथवा उस का डर हो, इन सब के बारे में सभी प्रकार की बातें की जा सकती हैं। लेकिन बातें बनाने से ही समस्या का समाधान नहीं हुआ करता। ऐसी परिस्थितियों में स्थिति का ठंडे दिमाग से सोचना उन के बारे में तर्क से काम लेना और फिर कार्यवाही करना ही अच्छा होता है।

आज देश के सभी लोग एक महान और विकट समस्या में ग्रस्त हैं। जब इस के बारे में मैं सोचता हूं तो यह अनुभव करता हूं कि यह हमारे भाग्य और परिस्थितियों ने हमारे ऊपर लाद दी हैं। जब मैं उसके बारे में विचार करता हूं तो यह अनुभव करता हूं कि हम इस के लिये सक्षम नहीं है यह समस्या आज की अथवा इस वर्ष की नहीं है, यह तो एक युग से चली आ रही समस्या है जिसका हमें मुकाबला करना है। इस का उल्लेख भारत के इतिहास में चला आ रहा है। इस का मुकाबला करने के लिये

†मूल अंग्रेजी में

हमारी स्थिति बहुत ही हीन है। लेकिन आज हमारे देश में जो मोड़ आया है, आज भारत के करोड़ों लोगों में जो परिवर्तन आ रहा है वह बहुत शक्तिशाली है। लेकिन फिर भी इस महान समस्या का मूल्यांकन कोई नहीं कर सकता। हम इस का मुकाबला करने के लिये बहुत छोटे हैं। नगण्य हैं लेकिन फिर भी हम इस का सामना कुछ विश्वास के साथ कर रहे हैं। इसलिये नहीं कि हमारा यह विश्वास है कि हम अपनी योग्यता के आधार पर इसका मुकाबला कर सकते हैं बल्कि इस विश्वास के साथ कि यह वह भारत है जो युगों से अब तक जीवितावस्था में चला आया है, इसकी जनता में हमारा अटूट विश्वास है, इसके करोड़ों व्यक्तियों में हमारा बिश्वास है, इस संसद् में जो कि इस कार्य को करती है हमारा अटूट विश्वास है। और इसी विश्वास के आधार पर हम अभी तक जीवित हैं।

चाहे कोई व्यक्ति कितना ही चतुर एवं महान क्यों न हो क्या वह यह सोच सकता है कि वह इस का मुकाबला अकेला अथवा छोटे-छोटे समुदायों की सहायता से कर सकता है। आखिर यह एक महान समस्या है। फिर भी गत दो वर्षों में कुछ लोगों ने परिश्रम कर के भारत की आजादी हासिल की है और भारत को अन्तर्राष्ट्रीय समृद्धि प्रदान की है एवं विश्व में इसे एक खास अहमियत प्रदान की है। यह कोई मामूली बात नहीं है जिसे कि कोई आदमी थोड़े समय में अथवा कुछ वर्षों में प्राप्त कर सके; चाहे आदमी कितना ही होशियार क्यों न हो वह गलती करेगा, हम से भी गल्तियां हुई हैं, क्योंकि यह एक ऐसा कार्य है जिस का कोई पूर्वोधारण नहीं था लेकिन फिर भी, इस के बावजूद भी हम ने राष्ट्रीय विकास किये हैं। कोई भी राष्ट्र ऐसा नहीं है जहां कि ऐसी बातें हुई हों, या जहां कि परिस्थितियां हमारी जैसी रही हों।

इस प्रकार आप देखते हैं कि हम इस महान कार्य में लगे हुए है। देश के करोड़ों लोग इस कार्य में लगे हुए है। हमारा देश एक विशाल देश है जहां विभिन्न प्रकार की समस्यायें हैं, विभिन्न प्रकार के मतों के लोग विद्यमान हैं। फिर भी हम ने उन सब को एकत्रित किया है। हमारे इस महान कार्य के लिये हमें आज महान सुविधायें दी गयी हैं। लेकिन मैं फिर भी आप से निवेदन करना चाहता हूं कि हमें कोरी बातों में नहीं बह जाना चाहिये। हालांकि हम यथार्थवादी बनना चाहते हैं।

माननीय सदस्यों ने बड़ी आलोचना की है। और उनका ऐसा करना ठीक भी है। मैं सोचता हूं कि उस आलोचना के पीछे मूलभूत बातों के बारे में एक समझौता है। हो सकता है कि मूलभूत बातों की विशालता एवं उनकी विस्तृता के बारे में काफी आलोचना करनी आवश्यक हैं और आलोचना करना भी ठीक। हो सकता कि कुछ माननीय सदस्य इन मूलभूत बातों से भी मत भेद रखते हों। हम ने अब तक जो कुछ किया है श्री रंगा उस से सहमत नहीं हैं। उनका तथा उन के दल का मत है कि इन सभी समस्याओं पर सोचने के बजाय परमात्मा में आस्था रखनी चाहिये। मेरी समझ में उनकी ये थोथी दलील नहीं आई। क्योंकि हमें तथ्यों एवं परिस्थितियों का मुकाबला करना है।

यदि आप हमारी आर्थिक स्थिति के बारे में सोचें जो कि मूल बात है, अगर आप पंचवर्षीय योजनाओं तथा अन्य बातों के बारे में सोचें तो आप को आलोचना करने के लिये बहुत कुछ मसाला मिल जायेगा, और उस की आलोचना करना स्वाभाविक भी हैं। क्या आप सोचते हैं कि सरकार के मंत्री एक दूसरे की अथवा एक दूसरे के कामों की आलोचना नहीं करते। मैं आप को यह बता देना चाहता हूं कि हालांकि हम जो आलोचना यहां की गई है उस से पूर्णतः सहमत नहीं हैं लेकिन फिर भी हम बहुत सी बातों से, बहुत सी आलोचनाओं से सहमति प्रकट करते हैं। और कुछ बाते तो ऐसी भी हैं जिन की आलोचना हम खुद कर सकते हैं। भारत में योजना जैसे जटिल कार्य की आलोचना करना अनिवार्य है। क्योंकि इन योजनाओं के पीछे इन सम्बधी प्रतिवेदनों के पीछे हमारी जनता, ४० करोड़ व्यक्तियों की आकांक्षाओं का स्पन्दन है। और शायद ही कोई महान व्यक्ति इन समस्याओं का मुकाबला निश्चितता के साथ कर सकता है। हम लोग एक दूसरे से, एक दूसरों के अनुभवों से, एक दूसरों की भूलों से ही कुछ सीख सकते हैं। और यह बात सच है।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

लेकिन किसी की आलोचना करने या उसे समझने के लिये यह बहुत जरूरी है कि उस का सही रूप देखा जाये उस के बारे में पूरी बातें समझने की कोशिश की जाये, यह नहीं कि उस की किसी थोड़ी सी बात अथवा कुछ परिस्थितियों को लेकर ही आलोचना शुरू कर दी जाये। योजना के मामले में सैकड़ों, हजारों और करोड़ों बातें मिली जुली हैं। यह मामला ऐसा नहीं है जो केवल अवसर पर ही छोड़ दिया जाये, या किसी और बात के ऊपर छोड़ दिया जाये, और न यह मामला ऐसा छोटा है जैसे कि धर्मशाला आदि का निर्माण किया जाना हो। यह मामला कोई योजना नहीं है। योजना सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन की एक झांकी है। इसमें देश के ४० करोड़ व्यक्तियों की प्रगति निहित है। अतः कोई भी आलोचना करने से पूर्व हमें यह बात पूरी तरह से समक्ष लेनी चाहिये कि हमारे सामने देश के पुनर्निर्माण का एक महान कार्य है जिस में ४० करोड़ व्यक्ति रहते हैं। प्रत्येक समस्या पर देश में विद्यमान परिस्थितियों तथा अवस्थाओं के सम्पूर्ण स्वरूप को सामने रख कर विचार किया जाना चाहिये।

देश में बेरोजगारी के प्रश्न को ही लीजिये। यह हमारे लिये एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। इस समस्या को किस प्रकार हल किया जाये उस का उल्लेख तो मैं यहां नहीं करूंगा लेकिन यहां कुछ ऐसी बातें कही गई हैं मानों सरकार की मूर्खता ही का परिणाम है कि यह समस्याहल नहीं हो सकी है। बेरोजगारी की समस्या हमारे देश में ही नहीं है बल्कि विश्व के बहुत से देश इस समस्या से ग्रस्त हैं। यह बात ठीक है कि हमें इस पर विचार करना चाहिये लेकिन केवल कोरी आलोचना करने से कोई लाभ नहीं होगा। इस बारे में पहली बात तो यह है कि मोटे तौर पर हमें यह देखना होगा कि हम कहां जा रहे हैं। दूसरी बात यह है कि चाहे श्री रंगा के कुछ भी विचार क्यों न हो हमें आगे बढ़ना होगा। हमें आगे बढ़ने के लिये योजना बनानी होगी। (**अन्तर्बाधा**) हम वास्तविक स्थिति से काफी दूर हैं। मैं नहीं चाहता कि हमारा देश अमरीका, इंगलिस्तान अथवा किसी दूसरे देश की प्रतिमूर्ति बने। उन के यहां भी नई समस्यायें आ गई हैं, यह ठीक है कि उन्हों ने प्राथमिक समस्याओं का समाधान कर लिया है लेकिन फिर भी नई समस्यायें आ उठी हैं। हमारे सामने भी नई समस्यायें आयेंगी। उन समस्याओं का तो मैं अब कोई उल्लेख नहीं करूंगा। लेकिन आज हमारे सामने मूल, और प्राथमिक समस्यायें हैं जो सम्पूर्ण मानव जाति के सामने सभी जगह विद्यमान हैं। जो उन सभी राज्यों में विद्यमान हैं जिन्हें आप नया जीवन देना चाहते हैं। यह ही वह प्राथमिक समस्या है जो हमारे सामने है। इस के बाद ही दूसरी समस्यायें आती हैं। हमें सदैव ही देश के ४० करोड़ व्यक्तियों का ध्यान रखना चाहिये। और जैसे ही आप यह बात भूल जाते हैं वैसे ही आप गुमराह हो जाते हैं। हमारे बहुत से दल इस बात को भूल जाते हैं। युगों से बहुत से व्यक्ति गरीबी के शिकार हुए हैं और इस से छुटकारा पाने के लिये निरन्तर लड़ते रहे हैं। गरीबी से छुटकारा पाने के लिये महा कठोर लड़ाई और अपने परिश्रम से ही लोगों को ऊपर उठते देख कर हमें प्रेरणा मिलती है।

इस समस्या का हल करने के बहुत से तरीके हैं। हम दूसरे देशों से सीख सकते हैं, हम अपने अनुभवों से सीख सकते हैं। लेकिन मैं इतना अवश्य कह सकता हूं। कि यदि हम देश में विद्यमान गरीबी तथा बेरोजगारी से मुक्ति पाना चाहते हैं और देश को जनता के रहन सहन के स्तर को ऊंचा उठाना चाहते हैं, तो हमें विज्ञमान तथा टेक्नोलोजी के आधुनिक उपयोग का सहारा लेना होगा और इस कार्य के लिये प्रशिक्षित व्यक्तियों की बड़ी आवश्यकता है। और मैं यह बात दावे के साथ कह सकता हूं कि इस के अतिरिक्त और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। हो सकता है कि अन्य मानवीय प्रयत्नों से आप सहमत न हों लेकिन इस प्रयत्न में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है। यही एक ऐसा साधन है जिस के द्वारा आप लोगों का स्तर ऊंचा उठा सकते हैं अधिक उत्पादन कर सकते हैं।

हम समाजवाद की बात करते हैं । मैं समाजवाद के मूलभुत विचारों से आज से ५० वर्ष पहलें से ही प्रभावित हूं । लोग इसकी आलोंचना करते हैं और आलोचना की गुंजाईश है भी । किन्तु यदि आप इसका विश्लेषण करें तो फिर भी आप आधुनिक वैज्ञानिक एवं टेक्निकल उपायों की ही शरण लेंगे । और जब तक आप इन साधनों को नहीं अपनायेंगे तब तक समाजवाद नहीं हो सकता ।

हमारी आर्थिक व्यवस्था की भी कटु आलोचना की गई है । कुछ आलोचनाएं न्याय-संगत भी है । लेकिन फिर भी आलोचना करते समय कुछ बातें छूट गई हैं । आर्थिक व्यवस्था की आलोचना करते समय आप कृषि, उद्योग, मूल आधार बात---मानव, अर्थात् प्रशिक्षित मानव के बारे में विचार कर सकते है । लेकिन यह बात आप को माननी पड़ेगी कि जब आप वैज्ञानिक तथा टेक्नीलोजीकल उपायों को अपना चुके हैं तो यह आवश्यक है कि आप के यहां प्रशिक्षित व्यक्ति हों ।

यदि आप कृषि की ही बात लें---हालांकि बहुत कुछ उस के बारे में कहा जा चुका है तो आप देखेंगे कि कृषि व्यवस्था में स्पष्ट परिवर्तन हुआ है वह ठीक दिशा में प्रगति कर रही है । यह प्रगति गत १२ वर्षों के कठोर परिश्रम और परिस्थितियों का ही परिणाम है । इसमें कोई संदेह की गुंजाइश नहीं है कि यह ठीक दिशा में प्रगति कर रही है । और हमने एक मोड़ लिया है । हो सकता है कि हमारे सामने भविष्य में कुछ अधिक कठिनाइयाँ आयें लेकिन यह निश्चय है कि इस मोड़ के फलस्वरूप हमारे खाद्य का उत्पादन बढ़ेगा । हम प्रकृति पर निर्भर हैं और हो सकता है कि आगामी कुछ वर्षों तक प्रकृति पर और निर्भर रहें लेकिन प्रकृति की इस निर्भरता को हम खाद्यान्नों का भाँडार कर के, और गहन खेती आदि कर के बहुत कुछ कम कर सकते हैं । और हम वह कर भी रहे हैं । माननीय सदस्य यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि चीन में बहुत कुछ किया गया है लेकिन फिर उसे भी प्रकृति पर निर्भर करना पड़ता है । प्रकृति से काफी अलग रहने और कृषि में काफी विकास करने के बावजूद भी वहां अकाल पड़ते रहे हैं । अतः परिस्थितियों को ध्यान में रख कर आप लोग जो आलोचना करते हैं वह ठीक नहीं है । उससे कुछ सहायता नहीं मिलती ।

मेरा विचार है कि प्रकृति पर निर्भरता कम होंती जा रही है और कृषि व्यवस्था में इस दृष्टि से सुधार हो रहा है कि वह आधुनिक ढंग से चल रही है । किसान आजकल अच्छे हल, अच्छा बीज, तथा अन्य बहुत सी चीजों का प्रयोग कर रहा है । आज का किसान अधिक से अधिक आधुनिक किसान बनता जा रहा है । साथ ही वह सहकारिता प्रिय बनता जा रहा है । वह सुधार कर रहा है । श्री रंगा ने जिस प्रकार के किसान का चित्रण किया है और जिन उपायों का वर्णन किया है मैं कह सकता हूं कि उन ठगों से कोई प्रगति नहीं हो सकती । सम्पूर्ण विश्व का अनुभव भी हमें यह बताता है । वह तभी संभव है जबकि हमारे यहां काफी मात्रा में भूमि हो, लोगों का रहन सहन का स्तर काफी नीचा हो---लेकिन वह आज संभव नहीं है । अत मोटे तौर पर मैं कह सकता हूं कि कृषि आजकल अच्छाकार्य कर रही है ।

औद्योगिक क्षेत्र में भी काफी प्रगति हुई है । हमारे देश में इस क्षेत्र में जो तेजी से प्रगति हो रही है उससे लोग हिल उठते हैं । मैं कह नहीं सकता कि सभा इस बात से सहमत भी है अथवा नहीं क्योंकि हम ऐसी परिस्थितियों में रह रहे हैं कि यह नहीं जानते कि बाहर क्या हो रहा है । लेकिन जो लोग उद्योगों की उन्नति को देखते हैं निश्चय ही वे आश्चर्य में पड़ जाते हैं । बड़े उद्योगो के बारे में तो लोग प्रायः न्यूनाधिक रूप में जानते हैं लेकिन मझौले तथा छोटे उद्योगों में जो क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे है उन के बारे में बहुत थोड़े ही लोग जानते है । हमें इस बात का सही पता तभी चलता है जबकि कोई विदेशी दर्शक उन्हें देख कर उन के बारे में अपना मत प्रकट करता है । मैं यह बात इसलिये नहीं कह रहा हूं कि मैं विदेशी दर्शकों की राय को महत्व देता हूं बल्कि इसलिये कह रहा हू कि वे हमारी प्रगति के आलोचक हैं, और वे तब तक हमारी प्रगति की सराहना नहीं कर

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सकते जब तक कि वे ऐसा करने के लिये मजबूर न हो जायें। और जब ऐसे लोग हमारी इस प्रगति की प्रशंसा करते हैं तो निश्चय ही उनकी प्रशंसा का कुछ अर्थ है, कुछ महत्व है ।

अभी एक दिन म एक लेख पढ़ रहा था---एक बड़े अखबार के एक बड़े प्रसिद्ध वित्तीय मामलों पर लिखने वाले सम्पादक का लेख। उन की बात पर मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ । लेख में उन्होंने कहा था कि भारत में छोटे और मध्यम दर्जे के उद्योगों का विकास "बड़ी तेजी से और अंधाधुन्ध" हो रहा है उन्होंने अपने उस लेख में कई बातों की नुक्ताचीनी भी की, लेकिन आखिर में यही कहा है कि सारे भारत में चारों तरफ बढ़ाव ही बढाव नजर आता है, उसकी शक्ल बदलती जा रही हैं। बाहर के देशों से आने वालों को ऐसा ही लगता है। लेकिन यहां तो हम यही रोना रोते रहते हैं कि भारत में कुछ भी नहीं हो रहा है। बड़ी अजीब सी चीज है कि लोग असलियत को देख ही नहीं पाते, वे कुछ ऊपरी चीजों को, ऊपरी कुछ खराबियों को ही असलियत समझ लेते हैं। वैसे खराबियां तो हैं ही, बेशुमार हैं लेकिन वह असलियत तो नहीं ।

आज हम एक ऐसे ज़माने में रह रहे हैं जब भारत के लोगों---करोड़ों लोगों की जिन्दगी में तरह-तरह से तब्दीलियां हो रही हैं---रोज़ बरोज़ तब्दीलियां हो रही हैं। किसान की ज़िन्दगी भी बदल रही है और पढ़ने पढ़ाने वालों की भी। अपने देश के पढ़ाई के ढंग की हम अक्सर नुक्ताचीनी करते हैं और सही करते हैं। लेकिन पढ़ाई का तौरतरीक़ा, पढ़ाई का ढंग, हमारी जिन्दगी में एक इन्कलाब भी पैदा करता जा रहा है नुक्ताचीनी करते वक्त, हम यह भूल जाते हैं। ये स्कूल-कालेज हमारे देश में एक इन्कलाब लाने में बड़ा हाथ बंटा रहे हैं। पढ़े लिखे नौजवानों की तादाद हर महीने, हर साल बढ़ती जा रही हैं। हर साल दस लाख पढ़े-लिखे नौजवान तैयार हो जाते हैं। आज उन की तादाद ४ करोड़ ५० लाख है तीसरे प्लान के पूरा होते-होते उन की तादाद ६ करोड़ हो जायेगी। इन पढ़े-लिखे लोगों में लड़के भी हैं, और लड़कियां भी। लड़कियों के पढ़े-लिखे होने की बात और ज्यादा अहमियत की है। इसलिये कि अगर इन्कलाब घर से ही शुरू हो, तो फिर कोई चीज़ उस से अछूती, उस से अलग नहीं रह सकती। इस तरह आज हमारे देश में सैकड़ों तरफ से, तरह-तरह से, हर तरफ से हर चीज़ में इन्कलाब आ रहा हैं।

और अगर हम इस सवाल पर एक वसी नज़रिये से, एक व्यापक दृष्टिकोण से विचार करें, तो दिल अपनी कामयाबी, अपनी जीत की खुशी से भर जाता है। हमारा दिल दूना हो जाता है। इस कामयाबी पर। इसलिये कि हमारी तरक्की के रथ का पहिया आगे बढ़ रहा है और हम सब उसी के हिस्से हैं। हमारी पार्लियामेन्ट, हमारी विधान सभायें, और कारखानों में काम करने वाले करोड़ों लोग और स्कूल-कालिजों के करोड़ों लोग---सभी उस के हिस्से हैं। हमारा पूरा देश जैसे एक बड़ा कारखाना है, और अब वह ज्यादा अच्छे ढंग से, ज्यादा कारगर तरीके से काम करने लगा है। मैं आप को बताना चाहता हूं, भारी-भरकम और लच्छेदार अल्फाज़ में नहीं, सीधे-सादे अल्फाज़ में आप को बताना चाहता हूं कि देश की बढ़ती, उस की तरक्की की यह तसवीर देख कर, दिल में कितनी गरमी, कितनी तेजी पैदा हो जाती है, कितनी खुशी होती है अपनी कामयाबी पर, अपनी तरक्की पर ।

पंचसाला योजना की रिपोर्ट आप देखिये। उस में आंकड़े ही आंकड़े भरे हैं, लम्बे-चौड़े आंकड़े। उस में लच्छेदार अल्फाज़ नहीं हैं। अदबी खुसीसियात नहीं हैं। लेकिन अगर आप उस की छानबीन करें, और उस के ढांचे से, उस के ब्यौरे और आंकड़ों में थोड़ा हट कर, उन के पीछे जो चीज़ है उसे देखने की कोशिश करें तो आप देखेंगे कि उन आंकड़ों में जिन्दगी बोल रही है, हिलोरें ले रही हैं, उनके पीछे उन करोड़ों लोगों के लोहू की थिरकन है जिनकी हर तरह की तरक्की से उस का ताल्लुक है। लोग इसे एक जज्बाती नज़रिया कह सकते हैं। ठीक है, लेकिन इस जज्बाती नज़रिये में भी कुछ

है जिसे नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। और अगर इस जज्बाती नजरियों से योजना को देखा जाये, उसे समझने की कोशिश की जाये, तो असलियत की ज्यादा साफ तसवीर हमें दिखती है। प्लान के कुछ आंकड़ों से ही उलझे रहने पर, हमें असलियत की झांकी नहीं दिख पाती ।

इसीलिये मैं कहता हूं कि आर्थिक दृष्टि से यह मंजिल बड़ी मुश्किल है, मुश्किलात से भरी हुई है, लेकिन हमें जरूरी तौर पर उस से गुजरना पड़ेगा, क्योंकि उस से गुजरने पर ही उन, मुश्किलात को हल करने के बाद ही, हम बेहतर जमाना ला सकेंगे और इसीलिये हम सभी मुश्किलात से जूझ रहे हैं। इस में अफसोस की कोई बात ही नहीं है। खेती बारी में ही, या उद्योग-धंधों में, हर देश इसी तरह मुश्किलात झेल कर ही आगे बढ़ता है। मैं आप को ज्यादा ब्यौरेवार तरीके से बता सकता हूं कि भारत उद्योग-धंधों के मामले में कितना आगे बढ़ा है लेकिन उस के लिये ज्यादा वक्त चाहिये ।

श्री रंगा ने बहुत सी बातें कही थीं। उन्होंने ही शायद यह कहा था कि हम ने हथ करघे से बुनाई करने वालों को भुला दिया है और बिजली से चलने वाले करघे चला कर उन को बेरोजगार बना दिया है। सब से पहली चीज तो यह कि उन को इस के बारे में ठीक-ठीक तथ्य मालूम नहीं है। दूसरी चीज यह कि वह नहीं देख पाते कि बेहतर टेकनीक के जरिये ही हर तरक्की की जाती है, पुराने टेकनीक से चिपके रह कर नहीं। पुरानी टेकनीक को छोड़ने में हमें तभी कोई आनाकानी होती है, जब उसे एकदम एकबारगी चालू करने से समाजी तौर पर किसी नुकसान का अंदेशा हो। वह तो दूसरी ही बात हुई लेकिन हथकरघे के बारे में तो चीज बिलकुल ही दूसरी है। हथकरघा उद्योग में तो हम ने २५ लाख हथकरघे और उन से बुनाई करने वाले बुनकरों को काम दिया है, जिन की तादाद आज पहले से कहीं ज्यादा है। हथकरघे से तैयार होने वाले कपड़े का उत्पादन १९५१ में ८५ करोड़ गज था, जो अब १९६० में १ अरब ८६ करोड़ हो गया है, यानी ड्योढे से ज्यादा हो गया है। इस बढ़ती का ४० फी सदी भाग सहकारी संस्थाओं के जरिये हुआ है, जिससे पता चलता है कि सहकारी संस्थायें कितनी तेजी से आगे बढ़ रही हैं ।

श्री डांगे ने नागपुर-प्रस्ताव का जिक्र किया था। उन का कहना है कि हम ने नागपुर-प्रस्ताव को भुला दिया है। मैं उन को यकीन दिलाता हूं कि हम ने उसे कतई नहीं भुलाया है। वह हमारे दिमागों में ही नहीं, हमारे कामों में भी मौजूद है। देश में सहकारिता तेजी से आगे बढ़ रही है। सहकारिता के दो हिस्से हैं---सेवा सहकारी संस्थायें और मिलीजुली फार्मिंग की संस्थायें। यह सही है कि हम सेवा सहकारी संस्थाओं पर ज्यादा जोर दे रहे हैं और इसीलिये वे ज्यादा तेजी से आगे आ रही है। लेकिन दूसरी संस्थायें भी बढ़ रही हैं, उतनी तेजी से न सही। हम जान बूझ कर सेवा सहकारी-संस्थाओं पर ज्यादा जोर दे रहे हैं। इसलिये कि सहकारिता के लिये लोगों को प्रशिक्षित करना पड़ेगा। उन को सीढ़ी-दर-सीढ़ी आगे ले जाना पड़ेगा। हमारा मकसद यही है कि जहां भी मुमकिन हो, और लोग तैयार हों, वहां सहकारी मिली-जुली खेती चालू की जाये। लेकिन अभी इतना ही काफी है कि देश भर में सेवा सहकारी संस्थायें फैला दी जायें। और हमें यकीन है कि इस के बाद जनता खुद ही इस के आगे का कदम उठा लेगी। हम उन को मजबूर नहीं करेंगे। यह भी याद रखना चाहिये कि मिलीजुली खेती का मतलब यह नहीं है कि किसानों के मालिकना अधिकार खत्म हो जायेंगे ।

चीनी का उत्पादन देखिये कितनी तेजी से, यकायक बढ़ गया है और हमारे पास फालतू चीनी का स्टाक भी बचने लगा है। इस्पात का उत्पादन भी देखिये। इन सबको देख कर मुझे लेनिन की बात याद आती है। लेनिन ने सोवियत इन्कलाब के शुरूआती दौरे में कहा था कि कम्युनिज्म के माने हैं सोवियतें (पंचायतें) और बिजली का योग। भारत के लिये भी प्रगति माने हैं पंचायतें और बिजली की ताकत का योग। इसमें थोड़ा फर्क भी है। हमें बिजली पर ज्यादा जोर देना है। इसलिये कि बिजली

की ताकत हर चीज को तबदील कर देगी। कल-कारखानों, खेती-बारी वगैरह सभी चीजों को बदल कर रख देगी। हमारी पार्लियामेंट भी बड़ी पंचायतें है। इसलिये पंचायतें और बिजली दोनों मिल कर देश की पूरी शक्ल बदल देंगी।

अपनी योजना के बारे में मुझे एक ही बात की परेशानी है—यह कि हमारे यहां बिजली की ताकत काफी तेजी से नहीं बढ़ रही है। बढ़ तो रही है, लेकिन उतनी तेजी से नहीं। इसीलिये हमें उसकी कमी की वजह से कई ऐसी चीजें छोड़ देनी पड़ती हैं जो आज जरूरी हैं।

इस्पात के बारे में, मुझे बताया गया है कि दूसरी योजना के लिये जो लक्ष्य रखे गये वे पूरे किये जा चुके हैं। आचार्य कृपालानी का कहना है कि हमने आधे लक्ष्य की भी पूरे नहीं किये हैं। हम उनसे काफी पिछड़ गये हैं—उनका यही ख्याल है। इसमें सचाई नहीं है। सवाल असल में नजरिये का है। लक्ष्य पूरे करने लायक ताकत और मशीनें हमारे पास हैं। लेकिन नयी मशीनें एक दम तो अपने पूरे जोर से उत्पादन शुरू नहीं कर सकतीं। जैसे हर नयी कार के मामले में होता है। हर नयी कार को थोड़ा वक्त लगता है अपनी ठीक-ठीक रफ्तार तक पहुंचने में। हमने उत्पादन की क्षमता का जितना लक्ष्य रखा था, वह हमारे पास मौजूद है। अगले १८ महीनों में उत्पादन की रफ्तार और तेज हो जायेगी और दूसरी भी कई चीजें मदद करने लगेंगी उत्पादन को बढ़ाने में। अभी तो इतनी सारी मुश्किलात होते हुए भी, हमने इस्पात का उत्पादन शुरू कर दिया है। अब सारी कोशिश इसी की है कि उसे बढ़ाया जाये।

श्री डांगे ने अपने भाषण के दौरान कुछ आंकड़ों का जिक्र किया था। मैं उस वक्त यहां नहीं था। मैंने उनकी स्पीच की रिपोर्ट पढ़ी है। उसके आंकड़े देख कर तो मैं आंखें मलता रह गया। श्री डांगे का कहना है कि चैकोस्लोवाकिया के १ करोड़ २० लाख लोग ६० करोड़ टन इस्पात पैदा करते हैं। इसलिये अगर हम ४० करोड़ भारतीय ४० करोड़ टन भी पैदा करने लगें, तो कोई बड़ी बात नहीं। उन्होंने आगे कहा था कि लुक्जेमबर्ग जैसा छोटा सा देश भी ३० करोड़ टन इस्पात पैदा करता है। कुल मिला कर सारी दुनिया का उत्पादन भी इतना नहीं है।

†**एक माननीय सदस्य** : उनके भाषण की वह रिपोर्ट अशुद्ध है।

†**श्री मुहम्मद इलियास** (हावड़ा) : श्री डांगे ने कहा था कि चैकोस्लोवाकिया ६५ लाख टन इस्पात पैदा करता है।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : तो ठीक है। उनको अपनी स्पीच की अधिकृत रिपोर्ट शुद्ध करा देनी चाहिये। लेकिन इससे पता चलता है कि इतने सधे हुए दिमाग के लोग भी कभी-कभी ऐसी मोटी गलतियां कर बैठते हैं।

इस्पात और बिजली—दो ऐसी बुनियादी चीजें हैं, जो देश की तरक्की तय करेंगी। इन पर ही बढ़ती और तरक्की का दारोमदार है। अभी भी कुछ ऐसे लोग हैं जो समझते हैं कि हम इस्पात पर जरूरत से ज्यादा जोर दे रहे हैं। मैं पूरे भरोसे के साथ आपको बताता हूं कि इस्पात तो हम अभी जितना भी ज्यादा पैदा करें, वह थोड़ा ही रहेगा सौ साल बाद की बात मैं नहीं जानता, पर अभी तो यही हालत है। आप आज चाहे जितना ज्यादा इस्पात पैदा कर लें, उसकी जरूरत बनी ही रहेगी। सोवियत यूनियन आज ७ करोड़ १० लाख टन इस्पात पैदा करता है, और फिर भी उसका उत्पादन हर साल कई लाख टन बढ़ता जा रहा है। अभी उनकी जो योजना चल रही है, उसके पूरा होते-होते, वहां ९ करोड़ ४० लाख टन इस्पात होने लगेगा। फिर भी वे बाहर से जितना भी मिले इस्पात और

†मूल अंग्रेजी में

लोहा खरीदने के लिये तैयार रहते हैं। एक आगे बढ़ते हुए देश के लिये तो इस्पात की आवश्यकता दिन दूनी बढ़ती जाती है। इस्पात के जरूरत से ज्यादा उत्पादन की गुहार तो वही लोग मचाते हैं, जो पुराने ढंग से सोचते हैं, जो देश के आगे बढ़ने की बात, तबदीली की बात ही नहीं सोचते। निजी उद्योग वाले ही अक्सर ऐसी गुहार मचाते है, क्योंकि वही कम उत्पादन के बल पर ऊंचे दाम पाने की बात सोचते हैं। वैसे इस्पात के मामले में जरूरत से ज्यादा उत्पादन का सवाल ही नहीं उठता। उसके लिये तो सवाल यही रहता है कि या तो ज्यादा से ज्यादा इस्पात पैदा करे या फिर तरक्की न करे, जहां का तहां खड़ा रहे। इसलिये देश को आगे बढ़ाने के लिये इस्पात और बिजली बहुत जरूरी हैं। इसीलिये आज हमें सोचना है कि इस्पात का उत्पादन बढ़ाने के लिये नये-नये इस्पात कारखाने खोले जायें, चौथा फिर पांचवां और छठवां, और इसी तरह दसवां कारखाना भी हमें स्थापित करना है। बिल्कुल साफ है कि उद्योग ही नहीं, कृषि-खेती बारी के मामले में भी हमारी तरक्की इसी बात पर निर्भर होगी कि हम इस्पात के मामले में कितनी तरक्की करते हैं। आज भी हमारे यहां खेती बारी की तरक्की लोहा और इस्पात की कमी की वजह से काफी रुकी हुई है। हमारी जरूरत बढ़ती जा रही है, इसलिये जितना भी ज्यादा उत्पादन होता है खप जाता है। और, चौथा इस्पात कारखाना खड़ा करना बहुत ही जरूरी हो गया है। अफसोस इसी बात का है कि हम उतनी तेजी से आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं, जितनी कि चाहिये। हम शायद कोई शकुन विचार रहे हैं यह कहने के लिये कि आज हमारी तीसरी योजना शुरू होगी। हमारे देश में बड़े पुराने जमाने से यह आदत चली आ रही है कि हम हर काम शुरू करने के लिये शकुन विचारते है कि उसे कब से शुरू किया जाये।

वैसे योजना बना कर आगे बढ़ने के लिये कोई एक वक्त, कोई अर्सा मुकर्रर नहीं होता। योजना तो एक के बाद दूसरी और फिर तीसरी चलती ही रहती है। वक्त की अहमियत तो तभी सामने आती है जब हम देखना चाहते हैं कि एक अर्से में हम कितना आगे बढ़ पाये हैं। अभी कल ही सोवियत यूनियन से आये हुए, हमारे एक सम्माननीय मेहमान ने, सोवियत यूनियन के उपप्रधान मंत्री श्री कोसीगिन ने मुझे बताया था कि अब सोवियत के नेता योजना के बारे में अपने पुराने ख्यालात बदल रहे हैं। अब वे योजना के लिये कोई एक अर्सा मुकर्रर नहीं करते, क्योंकि उससे लोगों की गलत किस्म की आदत पड़ जाती है। लोग एक मुकर्रर वक्त से दूसरे मुकर्रर वक्त के आधार पर सोचने के आदी बन जाते हैं, जबकि योजना के मुताबिक आगे बढ़ने का काम लगातार, सिलसिलेवार ढंग से चलता ही रहता है। वह कभी रुकता ही नहीं। श्री कोसीगिन ने मुझ से कहा था कि अब इसीलिये सोवियत यूनियन में हर पांचवे साल योजना नहीं बनाई जाती, बल्कि हर साल अगले पांच साल के लिये योजना तैयार कर ली जाती है। इसी तरह योजना चालू रहती है, पांच साल पूरे नही होते—पांच ही बने रहते हैं। पता नहीं सभा के सदस्य इसको पूरी तौर से समझ भी पाये हैं या नहीं। मैं खुद बिल्कुल साफ ढंग से नहीं समझ पाया हूं। हां, लेकिन इसमें खास बात यही है कि योजना का सिलसिला लगातार चलता रहता है, जो काम आज होना है उसे आज ही करना पड़ेगा, किसी शुभ दिन का इन्तजार नहीं करना पड़ेगा, खास तौर से लोहा, कोयला और बिजली जैसी बुनियादी चीजों में, जिनकी हमें हमेशा ही जरूरत बनी रहती है।

कोयले की पैदावार की राह में भी बड़ी-बड़ी मुश्किलात आईं; लेकिन हमने तब भी काफी अच्छी कामयाबी हासिल कर ली। आज हम ६ करोड़ टन कोयले का उत्पादन कर रहे हैं। हमारी क्षमता ६ करोड़ टन कोयला पैदा करने की हो गई है। कोयले के बारे में सबसे मुश्किल यही आ पड़ी है कि उसका परिवहन ठीक से नहीं हो पाता। उम्मीद है कि अगले चार-पांच महीनों में यह मुश्किल भी हल हो जायेगी। इस मौजूदा मुश्किल की वजह यह है कि परिवहन के मामले में हम उतनी तरक्की नहीं कर पाये जितनी कि दूसरे मामलों में हमने की है। इसलिये सबसे जरूरी बात है कि हमें सभी मामलों में, सभी मोर्चों पर एक सी तरक्की करनी चाहिये। पिछले साल कोयले की कमी थी। अब

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

कोयले की पैदावार बढ़ गई, तो उसके परिवहन की समस्या खड़ी हो गई। उसमें भी कुछ सुधार तो किये गये हैं। पहले इतवार को कोयले की लदान नहीं की जाती थी; अब वह शुरू हो गई है। और भी कई उपाय किये गये हैं। फिर भी उनसे पूरा नहीं पड़ा। कुछ थोड़ी कमी रह ही गई है; और वह तभी पूरी होगी जब ज्यादा माल-डिब्बे मिलेंगे।

और अभी जो आम हड़ताल हुई थी, उसकी वजह से उत्पादन के सारे ढांचे को धक्का पहुंचा है। उस पर रुपये-पैसे का जो खर्च हुआ, वह तो हुआ ही; साथ ही, लोहा और इस्पात और खास तौर से कोयले का रेल-परिवहन भी काफी पिछड़ गया। कभी-कभी योजना में भी गलती रह जाती है। भारत जैसे इतने बड़े देश के लिये ऐसी कोई योजना बनाना बड़ा मुश्किल है कि जिसमें हर चीज़ बिल्कुल ही चौकस बैठे। गलती किसी ने भी की हो, ऐसे मामलों में वह सभी की गलती हो जाती है।

आखिर में, मुझे यही कहना है कि उद्योग-धंधों के मामले में हम काफी तेजी से, अच्छी तरह आगे बढ़ रहे हैं। गलतियां तो कुछ हैं और उनकी नुक्ताचीनी करना भी वाजिब है। पर मुझे बिल्कुल शक नहीं कि हमारा देश बड़ी तेजी से आगे बढ़ रहा है और उसके उद्योग धंधों की रफ्तार दिन-दिन और तेज होती जायेगी। हमारे देश में पंचायत समितियां भी बड़ी तेजी से बन रही हैं, और खेती की पैदावार पर उनका एक जबर्दस्त असर पड़ेगा।

हमारे मित्र, आचार्य रंगा ने प्रतिरक्षा के बारे में और फौज के मौजूदा 'चीफ ऑफ स्टाफ' की जगह आने वाले नये 'चीफ ऑफ स्टाफ' की नियुक्ति के बारे में कुछ बड़ी अजीब सी बातें कही हैं। उन्होंने पूछा है कि इसमें इतनी जल्दी क्यों की गई है। श्री रंगा ने अगर इस सिलसिले में मालूमात हासिल करने की कोशिश की होती, तो उनको पता लग जाता कि ज्यादातर देशों में यह इसी ढंग से होता है। कई ऐसे कारण हैं, जिनको देखते हुए बाद में बनने वाले नये 'चीफ ऑफ स्टाफ' की नामजदगी कई महीने पहले कर दी जाती है। इसलिये कि वह खुद उस ओहदे पर आकर कुछ दिन काम देख ले, उसकी पूरी जानकारी हासिल कर ले। इंग्लैण्ड जैसे ज्यादातर देशों में आम तौर पर यही होता है। हमने कोई नयी बात नहीं की।

पता नहीं माननीय सदस्यों ने नियुक्तियों के सवाल की छानबीन भी की या नहीं। ज्यादातर नियुक्तियां बड़े-बड़े अफसरों की चुनाव समितियां ही करती हैं। मन्त्रि-परिषद् की नियुक्ति समिति तो सिर्फ कुछ सबसे बड़े चोटी के अफसरों की नियुक्ति करती है, प्रतिरक्षा मन्त्रालय की सिफारिश को देखते हुए। आम तौर पर यही होता है।

श्री अशोक मेहता ने शिकायत भरे लहजे में एक सुझाव दिया है कि हमारे यहां इंगलैण्ड की तरह प्रतिरक्षा के बारे में कोई ह्वाइट पेपर (श्वेत पत्र) पेश नहीं किया गया। इंगलैण्ड में क्या होता है, इसकी मुझे पूरी जानकारी नहीं। कुछ याद सा पड़ता है कि शायद खास-खास चीजों के लिये वहां 'ह्वाइट पेपर' पेश किये जाते हैं। किस तरह के हथियार इस्तेमाल किये जायेंगे,—इसके बारे में 'ह्वाइट पेपर' पेश किये जाते हैं। हथियारों से मतलब है आज के आधुनिकतम विमानों से, जिनको चलाने के लिये किसी आदमी की जरूरत नहीं पड़ती, जो बिजली से चलाये जाते हैं। जो भी हो, हम इस पर गौर करेंगे। प्रतिरक्षा मंत्री ने मुझ से कहा है कि हम इसकी छानबीन करेंगे और अगर हो सका तो अपने यहां भी वैसे श्वेत पत्र पेश किया करेंगे। जाहिर है कि फौज कहां है—कहां जा रही हैं, क्या कर रही है—इसके बारे में हम तो जानकारी नहीं जुटा सकते। उससे दुश्मन को मदद मिल सकती है।

प्रतिरक्षा के बारे में, हमने अपनी आजादी हासिल करने का काम फौज की पुरानी परम्पराओं को तोड़ने से शुरू किया था। पहले तो फौज के बारे में, प्रतिरक्षा के बारे में सारी नीति इंगलैण्ड में बनाई जाती थी और खास-खास हथियारों का उत्पादन भी इंगलैण्ड में ही हुआ करता था। उस वक्त, हमारे देश के युद्ध-सामग्री कारखाने कोई खास उत्पादन नहीं करते थे। पहले विश्वयुद्ध के बाद ही, उनको मजबूर हो कर कुछ हथियारों का उत्पादन यहीं शुरू करना पड़ा था। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद और ज्यादा हथियारों का उत्पादन हमारे यहां ही होने लगा। इस तरह, दोनों युद्धों के कारण हमारे देश के युद्ध-सामग्री कारखाने काफी आगे बढ़े। सारा उत्पादन इंगलैण्ड में होना बन्द हुआ। फिर भी खास-खास हथियार वहीं बनते थे। हमें उसे बदलना पड़ा। इसलिये कि आज के जमाने में युद्ध का दारोमदार फौजियों पर इतना नहीं जितना कि हथियारों पर है। आजादी मिलने के हाल ही बाद, काश्मीर की लड़ाई हमारे सिर पर आ पड़ी थी। इसलिये तब्दीली का यह सिलसिला चलता ही रहा है।

इस सिलसिले में सब से बड़ी बात यही हुई है कि हमने हथियारों के उत्पादन और उसके बारे में वैज्ञानिक रूप से सोचने-समझने के काम में काफी प्रगति की है। प्रतिरक्षा मंत्रालय का विज्ञान विभाग एक बेजोड़ चीज है। आज की प्रतिरक्षा का सारा दारोमदार इसी बात पर है कि हम किस क़िस्म के हथियार बनाते हैं। इसके बारे में भी हमने काफी तरक्की की है। विमानों के उत्पादन में हमने जो तरक्की की है वह तो सभी को मालूम है। जबलपुर में फौजी ट्रकें बनाने का काम भी काफी अच्छा चल रहा है। वहां हर महीने १२० ट्रकें तैयार होती हैं और ट्रकें भी काफी अच्छी क़िस्म की होती हैं। जल्द ही वहां हर महीने १५० ट्रकें बनने लगेंगी।

हमारे देश में 'नेशनल कैडेट कोर' बड़ी तेजी से बढ रही है। उसकी तादाद दोगुनी-चौगुनी हो गई है। वह दिन दूर नहीं जब हर विद्यार्थी उसमें शामिल होगा। हमारे यहां अब जो नये अफसर आ रहे हैं, उनमें से ज्यादातर 'नेशनल कैडेट कोर' में रह चुके हैं।

फौजी कार्यवाहियों के बारे में, मैं कोई ब्यौरा आपको नहीं बता सकता ; जाहिर है। हां, इतना जरूर कह सकता हूं कि पहले हमारी फौजी कार्यवाहियां मूलतः उत्तर-पश्चिमी सीमा पर और पूर्वी सीमा पर ही केन्द्रित थीं। लेकिन चीन के साथ झगड़ा शुरू होने पर, हमें उसके बारे में एक नये सिरे से सोचना पड़ा। काफी सोच-विचार के बाद, हमने उसके लिये भी इन्तजामात किये हैं, जितने किये जा सकते थे। हम बड़ी तेजी से सड़कें बना रहे हैं।

श्री अशोक मेहता ने पूछा था कि चीनी हमला कब, कैसे और किस वक्त पर हुआ था ?

आज से दस साल पहले, १९५०-५१ में जब चीनी फौजें तिब्बत में दाखिल हुई थीं, तब हमें ऐसा कोई अन्देशा नहीं था कि हमारी सीमा पर भी कुछ गड़बड़ी होगी। पहले कभी भी तिब्बत के साथ मिलने वाली हमारी सीमा पर कोई हलचल नहीं थी। अब जब हलचल शुरू हुई तो हमें अपनी सीमा की हिफाजत की बात भी सोचनी पड़ी।

तभी एक हाई पावर कमिटी ऊंचे स्तर की एक समिति, सीमा प्रतिरक्षा समिति १९५१ या १९५२ में बनाई गई थी। उसने एक बड़ी ब्यौरेवार रिपोर्ट पेश की थी, और उसके कई सुझाव सरकार ने मान भी लिये थे। बात आज से दस साल पहले की है।

हमारा ख्याल था कि उत्तर-पूर्वी सीमा पर खतरे का ज्यादा अंदेशा था। शायद वह हमारी गलती ही रही हो लेकिन हमने दस साल पहले उसी को बचाने की बात सोची थी।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

इससे पहले, १९५० में सीमा पर हमारी कुल पांच चौकियां थीं—दो हिमाचल प्रदेश में और तीन नेफा में। तिब्बत की हलचल शुरू होने के बाद अप्रैल १९५१ तक हमारी चौकियां २५ हो गई थीं। मैं नेफा की बात कर रहा हूं। कुछ अर्से बाद, नेफा, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, वगैरह में चौकियों की तादाद और भी बढ़ा दी गई थी। १९५४ में सीमा के बिल्कुल पास ही चौकियां बना दी गई थीं। यह मैं इसलिये बता रहा हूं कि उन दिनों भी हम इसकी बाबत सोच रहे थे।

१९५१ में हमने लद्दाख में भी कुछ चौकियां स्थापित की थीं। उनमें फौजी टुकड़ियां रखी गई थीं। चौकियां काफी दूर-दूर थीं, इसलिये हमने अपनी सीमा के बिल्कुल पास तक पुलिस और फौज की टुकड़ियां गश्त के लिये भेजी थीं। वह गश्त कुछ इस तरह की होती थी, जैसेकि १०—१५ लोग मिल कर पहाड़ों पर चढ़ने जाते हैं। प्रशासन को मज़बूत करने के लिये १९५४ में लद्दाख की चौकियों को केन्द्रीय सरकार ने अपने हाथ में ले लिया था ; सावधानी के चौकसी के ख्याल से, क्योंकि उस वक्त कोई भी फौरी खतरा नहीं था। अक्साईचिन इलाके में आबादी नहीं थी, इसलिये हमने वहां चौकियां नहीं बनाई थीं। उसमें बड़ी मुश्किलात थीं। हां, लेकिन १९५० और १९५९ के बीच उस इलाके की गश्त के लिये लद्दाख में १६ बार टुकड़ियां भेजी गई थीं।

अक्साईचिन इलाके में कई ऐसे रास्ते थे जो गर्मियों में खुल जाते थे और जिनके जरिये बहुत पुराने जमाने से कारवां आया-जाया करते थे। चीनियों ने भी उनको इस्तेमाल किया था, आम तौर पर। लेकिन उनके इस्तेमाल करने से, वह इलाका उनका अपना तो नहीं होता। मध्य एशिया के इस रास्ते का इस्तेमाल आम तौर पर होता रहा है।

चीनियों ने १९५५ में उस रास्ते को एकसा करना शुरू किया उसे मोटरों के लायक बनाने के लिये। पता नहीं कि यह काम ठीक-ठीक कब शुरू हुआ। उसमें चीनियों को कई साल लग गये। उस वक्त हमें ठीक-ठीक पता भी नहीं था कि वह रास्ता हमारी सीमा में से होकर भी गुजरता है या नहीं। इस पर शक हमें सब से पहले १९५७ में हुआ, पीकिंग में छपे एक नक्शे को देख कर। नक्शा छोटा सा था। एक मैगज़ीन के आधे सफे के बराबर। हमने उस पर ऐतराज नहीं किया, क्योंकि तब हमारे पास कोई सबूत नहीं था।

अगली गर्मियों में, १९५८ में, हमने उस सड़क के दोनों छोरों का पता लगाने के लिये दो गश्ती टुकड़ियां भेजी थीं। दक्षिण की तरफ भेजी गई टुकड़ी ने पता लगा लिया कि वह सड़क हमारी सीमा के एक सिरे को काटती हुई चली है। दूसरी टुकड़ी एक अर्से तक लौटी ही नहीं। न लौटने वाली टुकड़ी की तरफ हमने चीन सरकार का ध्यान दिलाया और यह भी पूछा कि वह सड़क हमारी सीमा को काटती हुई चलती है या नहीं। हमने इसके बारे में सब से पहले १८ अक्टूबर, १९५८ को लिखा था। दूसरी टुकड़ी पहली के एक महीने बाद लौटी। तभी पक्की तौर पर यह पता चला कि चीनी लोग भारतीय इलाके के एक सिरे को सड़क की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं। उस वक्त तक उस सड़क के पश्चिम में कोई भी चीनी चौकी नहीं बनाई गई थी। हमारी टुकड़ियों को ऐसा कोई सबूत नहीं मिला था कि चीनियों ने हमारे उस हिस्से पर कब्ज़ा भी जमाया है। हम फिर चीन सरकार के जवाब की राह देखते रहे। उनका पहला जवाब दिसम्बर या जनवरी में आया था। मार्च, १९५९ में तिब्बत में गड़बड़ी शुरू हुई। वहां विद्रोह हुआ। और उसके बारे में चीन सरकार के साथ लिखा पढ़ी चली। हमने जून, १९५९ में अपनी एक गश्ती टुकड़ी चांग चेनमो घाटी के पास लानक-ला की तरफ भेजी। वहां चीनी नहीं थे। इससे पता चलता है कि उस सड़क के पश्चिम की ओर चीनियों का जमाव मुख्यतः १९५९ के जून से अक्टूबर के बीच में हुआ था। चांग-लुंग लुंगपा में और दूसरी

जगहों पर भी चौकियां बनाने के लिये जाने वाली गश्ती टुकड़ियों ने इसका पता लगाया था। उसके बाद ही हमने कोंगका दर्रे तक अपनी गश्ती टुकड़ी भेजी थी, जहां गोली चली थी और हमारे कई पुलिसमैन गोलियों के शिकार बन गये थे।

अक्साईचिन के उत्तरी इलाके की इस आम सड़क को चीनियों ने १९५० के आस पास तक तो आम तौर पर सड़क की तरह इस्तेमाल किया, और बाद में उसे मोटरों की सड़क बना लिया। चीनियों का बढ़ाव असल में तिब्बती विद्रोह के बाद, १९५९ में शुरू हुआ था। इसका नक्शों से कोई ताल्लुक नहीं। उनके बारे में तो हम कई साल पहले से ऐतराज कर ही रहे थे। लेकिन अक्साईचिन इलाके के बारे में खास तौर से असली मायनों में हमने अक्टूबर, १९५८ में विरोध-पत्र भेजा था। तिब्बती विद्रोह के वक्त उसके बारे में लिखा पढ़ी चल ही रही थी। विद्रोह १९५९ में हुआ था। उसी वक्त, अगस्त, १९५९ में प्रधान मंत्री ने यह मामला पार्लमेंट के सामने पेश किया था।

१९५९ की शरद के बाद से, चीनियों ने हमारे राज्य पर कोई और हमला नहीं किया, हां, उनके नक्शे मुख्तलिफ रहे।

अब इसके बारे में दो बातें हैं। पहली तो यह कि अगस्त, १९५९ के बाद से हमारी स्थिति में कोई फर्क नहीं आया है। तब से कोई नया हमला नहीं हुआ है और हम हमले का मकाबला करने के लिये काफी तैयार हो गये हैं।

सरकार पर यह इल्जाम लगाना ज्यादती होगी कि उसने चीनी हमले की बात पर पर्दा डालने की कोशिश की है। हमें तो उसका पक्का पता तभी चला जब हमारी दोनों गश्ती टुकड़ियां लौट आईं। तभी अक्टूबर, १९५८ में हमने उसके बारे में चीन सरकार को लिखा था। उनसे पूछ-ताछ किये बगैर, ठीक-ठीक पता लगाये बगैर, हम उस चीज़ को पार्लमेंट के सामने नहीं रखना चाहते थे। जनवरी में उनका अधूरा सा जवाब आया था। हमने फिर पूरे जवाब के लिये लिखा था। लेकिन तब तक मार्च में तिब्बत की उथल पुथल शुरू हो गई। बड़े पैमाने पर चीनियों का बढ़ाव १९५९ में ही हुआ था और तभी हमने यह मामला पार्लमेंट के सामने पेश कर दिया था।

सच तो यह है कि इस सीमा पर हम १९५१ से ही कार्यवाही करते रहे हैं, नेफा की सीमा पर हमने ज्यादा कारगर ढंग से कार्यवाही की है क्योंकि वह सीमा काफी मुश्किलात से भरी सीमा है। वहां सैंकड़ों मील तक कोई प्रशासन ही नहीं था। वहां हमने इतना इंतजाम कर लिया है कि किसी भी हमले को रोक सकते हैं। वहां लौंगजू के छोटे से गांव पर जरूर हमला हुआ था, उसके बाद कोई भी हमला नहीं हुआ। उसे रोकने में हम कामयाब रहे थे। उसके बाद हमने अपनी सीमा की दूसरी जगहों पर ताकत पहुंचानी शुरू की, और सड़कें बनाने का प्रोग्राम भी अच्छा चल रहा है।

कांगो के बारे में, आपने देखा ही होगा कि कल या परसों सुरक्षा परिषद् ने पहली बार एक प्रस्ताव पास किया था। इससे पहले शायद अगस्त में, या सितम्बर में उसने एक प्रस्ताव पास किया था। सबसे अजीब चीज़ यह है कि कांगो में इतना सब कुछ होते हुए भी सुरक्षा परिषद् ने कुछ भी नहीं किया। वह हाथ पर हाथ धरे, चुप बैठी तमाशा देखती रही। उसकी वजह यह थी कि सुरक्षा परिषद् के अन्दर भी एक किस्म की रस्सा कशी चल रही थी। उसका असर कांगों में उसकी कार्यवाही पर भी पड़ा। अब उसने पहली बार एक अच्छा प्रस्ताव पास किया है। हम चाहते थे कि कुछ मामलों में वह प्रस्ताव कुछ और आगे जाता। लेकिन फिर भी वह अच्छा है। अब सवाल यह है कि उस पर अमल कहां तक होगा।

सुरक्षा परिषद् ने पिछले साल जो प्रस्ताव पास किये थे, वे भी बुरे नहीं थे, लेकिन उनकी

व्याख्या कुछ ऐसे तंग नजरिय से की गई थी कि कांगों में कुछ किया नहीं जा सका। उम्मीद है कि इस प्रस्ताव के साथ वैसा नहीं होगा।

अब सवाल हे कि हम अपनी हथयारबन्द फोजें वहा भेजगे या नहीं। इसके बारे में आज सुबह ही मैंने एक सवाल का जवाब दिया है। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ने करीब तीन हफ्ते पहले हमसे कहा था वहां फौजें भेजने के लिये। एक तरफ तो हमारा ख्याल यह है कि संयुक्प राष्ट्र को कांगों से हटना नहीं चाहिये, उससे तो वहां मुसीबत खड़ी हो जायेगी। दूसरी तरफ़ यह भी है कि अभी तक संयुक्त राष्ट्र संघ कांगो में हाथ पर हाथ धरे बैठा था। हम नहीं चाहते थे कि हमारे लोगों की वहां उसी तरह बेइज्जती होती रहे। इसीलिये हम दुविधा में थे। हमने महासचिव से कहा भी था कि हम उसी सूरत में फौजें भेजने की बात सोचेंगे जब संयुक्त राष्ट्र संघ वाकई कुछ कारगार कार्यवाही करना शुरू करे। अब सुरक्षा परिषद् के इस प्रस्ताव से पता चलता है कि संयुक्तराष्ट्र अब वहां वाकई कुछ करने की सोच रहा है। इसलिये अपनी हथियारबन्द भेजने की संभावना भी अब बढ़ गई है।

माननीय सदस्यों ने और भी कई बातें कही थीं। मैंने उनके बारे में कुछ भी नहीं कहा है। और आपका काफी वक्त भी मैं ले चुका हूं। लेकिन अगर आप इजाजत दें, तो मैं एक बात का जिक्र और कर दूं। वह है भारत, बर्मा और चीन की सरहदों के मिलने की जगह के बारे में। इस मामले में बरमा की नुक्ताचीनी करना हमारे लिये उचित नहीं हे। बरमा ने ऐसा कुछ नहीं किया। दूसरा रास्ता उसके सामने यही था कि वह चीन के साथ बैठकर बात करने से इन्कार कर दें। मुझे ठीक से याद नहीं, पर शायद पिछले चार-पांच साल से चीन और बरमा के बीच बात चल रही थी। रफ्ता-रफ्ता ही दोनों एक दूसरे के करीब आये हैं। दोनों के बीच संधि की शर्तें तभी तय हुई थीं जब जनरल ने विन प्रधान मत्री की हैसियत से पीकिंग गये थे, यू नू के प्रधान मंत्री बनने से काफी पहले। इस तरह संधि की शर्तें तय होने में काफी वक्त लगा है, और उसके बाद ही श्री चाऊ एन लाई के वहां जाने पर ही, उस पर दस्तखत हुए हैं। हमें उस पर कड़ा ऐतराज हो सकता था। हम चीन से तो उसके बारे में कुछ भी नहीं कह सकते थे, क्योंकि चीन के साथ हमारी बात नहीं रही थी। और जब तक किसी संधि का हमारे देश पर कोई असर न पड़ता हो, तब तक उसके बारे में कोई ऐतराज करने का हमें हक भी क्या है? बरमा और चीन के बीच हुई संधि का हमारे ऊपर कोई असर नहीं पड़ता सिवाय इसके कि उसके मसविदे के साथ एक नक्शा भी जुड़ा हुआ था। उस चीनी नक्शे में जो सीमा दिखाई गई है, वह हमारे नक्शे से मेल नहीं खाती। हमने उसके बारे में बरमा और चीन की सरकारों को लिख दिया है। बरमा की सरकार ने संधि से पहले और बाद में भी बिल्कुल साफ़ तौर पर हमें बता दिया था कि वह उस नक्शे की उस व्याख्या को मंजूर नहीं करती, उससे उसका कोई मतलब भी नहीं। उसे तय करना भारत और चीन का अपना काम है। बरमा सरकार का ताल्लुक तो उसकी अपनी सीमा से और संधि की शर्तों से ही है। इस मामले में बरमा की सरकार ने बड़ी साफगोई से काम लिया है। इसलिये उसकी नुक्ताचीनी सुनकर मुझे अफसोस ही हुआ।

नेपाल का भी जिक्र किया गया था। एक माननीय सदस्य ने कहा था कि वह नेपाल की घटनाओं की ताईद नहीं करते। एक दूसरे माननीय सदस्य ने कहा था, मुझ पर इल्जाम लगाया गया था कि मैंने नेपाल के बारे में कुछ कहा था जब कि मुझे कुछ भी नहीं कहना चाहिये था। ऐसे मौके पर यह तय करना बड़ा मुश्किल हो जाता है कि क्या कहा जाये और क्या न कहा जाये। मैंने सिर्फ इतना ही कहा था कि नेपाल में लोकतंत्र को खत्म कर दिया

गया है और उससे मुझे बड़ा सदमा पहुंचा है । मैंने इससे ज्यादा कुछ भी नहीं कहा था, हालांकि मैंने इससे कहीं ज्यादा महसूस किया था ।

कुछ माननीय सदस्य समझते हैं कि हमें दूसरे देशों की सरकारों को हिदायतें देनी चाहिये । हम न तो वैसा कर सकते हैं और न करना ही चाहते हैं । उससे दूसरी सरकारें बेहद नाराज होंगी । उससे हमारे देश का भी कोई फायदा नहीं होगा । बल्कि उसका असर उल्टा ही पड़ता है ।

इसलिये अपने पड़ोसी मित्र देशों के बारे में कुछ कहते समय, माननीय सदस्यों को मेरी यह बात याद रखनी चाहिये कि हम उनकी नीतियां तय नहीं कर सकते, नेकनीयती के साथ अपनी इच्छा उनको बता सकते हैं । इससे ज्यादा कुछ नहीं ।

†**अध्यक्ष महोदय :** इस प्रस्ताव के बारे में १२३ संशोधन हैं । मैं यह मालूम करना चाहता हूं कि क्या कोई सदस्य अपना संशोधन अलग से मतदान के लिये रखना चाहते हैं ।

†**कुछ माननीय सदस्य :** सभी संशोधन एक साथ रख दिये जायें ।

अध्यक्ष महोदय : अब मैं प्रस्ताव सम्बन्धी सभी संशोधनों को एक साथ मतदान के लिये सभा में रखूंगा ।

संशोधन मतदान के लिए रखे गये और अस्वीकृत हुए ।

†**अध्यक्ष महोदय :** प्रश्न यह है :

"कि राष्ट्रपति की सेवा में निम्नलिखित शब्दों में एक अभिनन्दन पत्र प्रस्तुत किया जाये :—

कि इस अधिवेशन में समवेत लोक-सभा के सदस्य राष्ट्रपति महोदय के उस अभिभाषण के लिये, जो उन्होंने १४ फरवरी, १९६१ को एक साथ समवेत संसद् की दोनों सभाओं के समक्ष देने की कृपा की थी, उनके अत्यन्त आभारी हैं ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

अनुपूरक अनुदानों की मांगें (सामान्य), १९६०-६१

†**अध्यक्ष महोदय :** अब सभा में वर्ष १९६०–६१ के आय व्ययक (सामान्य) सम्बन्धी अनुपूरक अनुदानों की मांगों के बारे में चर्चा होगी तथा उन पर मतदान लिया जायेगा :—

प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ ।

अनुदानों की निम्नलिखित अनुपूरक मांगें प्रस्तुत की गईं :—

मांग संख्या	शीर्षक	राशि
१	२	३
१	वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय . . .	१,३८,०००
१५	शिक्षा मंत्रालय के अधीन विविध विभाग तथा अन्य व्यय .	१,०००
२१	वित्त मंत्रालय	३,००,०००

†मूल अंग्रेजी में